Adharajan's Haryanvi Saang-Style Raginis: An Analytical Study in the Context of Pingal Prosody and Folk-Cultural Perspectives (With Reference to Raginis 17–23)

अधराजण की हरियाणवी सांग-शैली रागणियाँ: पिंगल शास्त्र एवं लोक-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (रागणी 17–23 के संदर्भ में)

RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary | e-ISSN: 2455-3085
Double-blind peer-reviewed and refereed online Journal (Impact Factor-6.93)
11 (5) 16-23, 2026
©The Author(s) 2026
10.31305/rrijm.2026.v11.n05.003
https://rrjournals.com/

Received: 14 Mar, 2026
Revised: 12 Apr, 2026
Accepted: 14 Apr, 2026
Published: 15 May, 2026

*Anand Kumar Ashodhiya

Independent Researcher and Former Warrant Officer, Indian Air Force

Abstract: *This study presents a critical analysis of Haryanvi Sāng-style Rāgṇīs (17–23) from Adharājan, examining them through the combined frameworks of Pingal prosody and folk-cultural expression. Using a qualitative, text-centric methodology based on close reading and prosodic analysis, the paper explores how classical metrical principles interact with the flexibility of oral-performance traditions. The analysis highlights the dynamic relationship between narrative progression, emotional intensity, and structural design, demonstrating that elements such as mātrā-vinyāsa (syllabic distribution), flexible yati (caesural pauses), and evolving rhyme schemes are not merely formal devices but integral to the expressive and performative power of the compositions. The role of refrain (tek) and popular melodic templates (tarz) is also examined, showing how they enhance audience engagement while extending the accessibility of traditional metrics. The selected rāgṇīs, centered on the figure of Raskapūr, reveal a layered dramaturgy in which themes of love, conspiracy, power, and female subjectivity are articulated through dialogic and monologic poetic forms. Situated within a feudal-patriarchal socio-cultural context, these compositions function as sites of emotional expression, symbolic resistance, and cultural negotiation. The study further argues that Pingal śāstra, rather than remaining rigid, demonstrates considerable adaptability within vernacular practice, allowing for both structural innovation and experiential depth. By integrating literary, prosodic, and cultural perspectives, this paper establishes that Adharājan's work not only sustains the classical Pingal tradition but also redefines it through performative praxis, thereby contributing significantly to the evolving discourse of North Indian folk poetics and performance literature.*

*Corresponding Author
Anand Kumar Ashodhiya, Independent Researcher and Former Warrant Officer, Indian Air Force
ashodhiya68@gmail.com

Creative Commons Non Commercial CC BY-NC: This article is distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 License (http://www.creativecommons.org/licenses/by-nc/4.0/) which permits non-Commercial use, reproduction and distribution of the work without further permission provided the original work is attributed.

Access Online

Keywords: *Haryanvi Sāng Tradition, Rāgṇī Poetry, Pingal Prosody, Folk Performance Literature, Oral Traditions, Cultural Narratives, Gender Discourse, Performative Aesthetics*

Abstract in Hindi Language: *यह शोध-पत्र अधराजण की हरियाणवी सांग-शैली की रागणियों (17–23) का पिंगल शास्त्र तथा लोक-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि ये रागणियाँ शास्त्रीय छंद-विधान और लोक-परंपरागत अभिव्यक्ति के बीच एक सशक्त सेतु निर्मित करती हैं। गुणात्मक, पाठ-आधारित पद्धति के अंतर्गत निकट-पाठ और छंद-विश्लेषण के माध्यम से यह दर्शाया गया है कि मात्रा-विन्यास, यति-संरचना, तुकांत योजना और टेक की पुनरावृत्ति केवल काव्य-शिल्प तक सीमित नहीं रहती, बल्कि भाव-संप्रेषण, नाटकीयता और मंचीय प्रभाव के प्रमुख साधन बनती हैं। लोकप्रिय तर्जों के प्रयोग से रचनाएँ श्रवण-सुलभ बनती हैं और दर्शक-भागीदारी को सुदृढ़ करती हैं। चयनित रागणियाँ, जिनका केंद्र रसकपूर का चरित्र है, प्रेम, षड्यंत्र, सत्ता और स्त्री-अस्मिता जैसे विषयों को संवादात्मक और एकालापीय विन्यास में प्रस्तुत करती हैं। राधा–केशव रूपक, दरबारी षड्यंत्र और कारावास जैसी स्थितियाँ कथ्य को बहुस्तरीय बनाते हुए मध्यकालीन सामंती मानसिकता और स्त्री-विमर्श के अंतर्संबंधों को उद्घाटित करती हैं। अध्ययन यह भी रेखांकित करता है कि पिंगल शास्त्र, अपनी मूल संरचना को बनाए रखते हुए, लोक-प्रयोग में लचीला रूप ग्रहण करता है और नई अभिव्यक्तियों के लिए स्थान निर्मित करता है। समग्रतः, यह शोध प्रतिपादित करता है कि अधराजण की रागणियाँ परंपरा और प्रयोग के संतुलन के माध्यम से पिंगल परंपरा का पुनर्सृजन करती हैं। इस प्रकार वे उत्तर भारतीय लोककाव्य, प्रदर्शन परंपरा और स्त्री-विमर्श के अध्ययन के लिए एक महत्त्वपूर्ण स्रोत के रूप में स्थापित होती हैं।*

Keywords: *हरियाणवी सांग परंपरा, रागणी काव्य, पिंगल शास्त्र, लोक-प्रदर्शन साहित्य, मौखिक परंपरा, सांस्कृतिक आख्यान, स्त्री-विमर्श, प्रदर्शनात्मक सौंदर्यशास्त्र*

1 | अध्ययन की पृष्ठभूमि एवं संदर्भ

भारतीय साहित्यिक परंपरा अपनी बहुस्तरीयता, बहुभाषिकता और सांस्कृतिक बहुलता के कारण विशिष्ट स्थान रखती है, जहाँ शास्त्रीय और लोक—दोनों धाराएँ परस्पर अंतः क्रियात्मक संबंधों के साथ विकसित होती रही हैं। एक ओर संस्कृत-आधारित काव्यशास्त्र तथा पिंगल छंदशास्त्र ने साहित्यिक संरचना, अनुशासन और सौंदर्य बोध के मानक निर्धारित किए, वहीं दूसरी ओर लोक-साहित्य ने इन सिद्धांतों को अपने अनुभव-संसार के अनुरूप रूपांतरित करते हुए उन्हें जीवंत, लचीला और जन-सापेक्ष बनाया। इस संदर्भ में हरियाणवी सांग परंपरा उत्तर भारतीय लोक-नाट्य और काव्य-रचना का एक महत्त्वपूर्ण रूप प्रस्तुत करती है, जिसमें साहित्य, संगीत, अभिनय और सामाजिक विमर्श का सुसंगठित समन्वय परिलक्षित होता है।

अधराजण की हरियाणवी सांग-शैली रागणियाँ इस समन्वित परंपरा का प्रतिनिधि उदाहरण हैं, जो हरियाणा और राजस्थान के सांस्कृतिक अंतर्संबंधों को एक जीवंत लोक-आख्यान के रूप में प्रस्तुत करती हैं। यह परंपरा केवल मनोरंजन का माध्यम न होकर सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक चेतना के संप्रेषण का प्रभावी उपकरण भी रही है। रागणी, एक प्रमुख काव्यात्मक संरचना के रूप में, कथात्मकता, लयात्मकता और भावाभिव्यक्ति के अद्वितीय संलयन को अभिव्यक्त करती है। अधराजण की कथा, विशेषतः जयपुर राज्य, रसकपूर और महाराज जगतसिंह से संबंधित प्रसंगों पर आधारित होकर, लोकस्मृति और काव्यात्मक कल्पना के मध्य एक सशक्त सांस्कृतिक आख्यान का रूप ग्रहण करती है।

वर्तमान अध्ययन, रागणी 17–23 के विश्लेषण के माध्यम से, उस चरण पर केंद्रित है जहाँ कथा भावात्मक उत्कर्ष और नाटकीय जटिलता के चरम पर पहुँचती है। इस खंड में विरह, दरबारी षड्यंत्र, सत्ता-संघर्ष, स्त्री-अस्मिता तथा नैतिक विवेक जैसे तत्व अंतर संबद्ध रूप में उभरते हैं। रसकपूर का राधा-रूप में आत्म संवाद, महाराज जगतसिंह की मानसिक द्वंद्वावस्था, तथा दरबारी शक्तियों की षड्यंत्रकारी सक्रियता—ये सभी घटक कथा को बहुस्तरीय बनाते हुए लोक-सांस्कृतिक मनोविज्ञान का गहन उद्घाटन करते हैं। इस प्रकार ये रागणियाँ केवल प्रेम-कथा का विस्तार नहीं, बल्कि सामंती सत्ता-संरचनाओं और लैंगिक संबंधों के आलोचनात्मक विश्लेषण का माध्यम भी बनती हैं।

पिंगल शास्त्र के आलोक में इन रागणियों का परीक्षण यह दर्शाता है कि लोक कवि ने छंद, मात्रा-विन्यास, यति और तुकांत योजना जैसे शास्त्रीय तत्त्वों का सृजनात्मक रूपांतरण किया है। रागणी 17–23 में छंदात्मक लचीलेपन, टेक की आवृत्ति और तर्ज के चयन के माध्यम से भावात्मक तीव्रता तथा मंचीय प्रभावोत्पादकता को सुदृढ़ किया गया है। करुण, वीर और श्रृंगार रसों का अंतर संयोजन इन रचनाओं को विशिष्ट सौंदर्यात्मक गहराई प्रदान करता है।

पूर्ववर्ती शोधों में हीर–राँझा तथा भगत पूरणमल रागणियों पर किए गए विश्लेषणों ने यह स्थापित किया है कि हरियाणवी रागणी परंपरा में पिंगल शास्त्र की संरचनात्मक उपस्थिति के साथ-साथ लोक-जीवन की अनुभवजन्य संवेदनाएँ सक्रिय रूप से कार्य करती हैं (Ashodhiya, 2026a; 2026b; 2026c)। वर्तमान अध्ययन उसी शोध-परंपरा का विस्तार करते हुए अधराजण की रागणियों को एक विशिष्ट सांस्कृतिक और काव्यात्मक परिप्रेक्ष्य में स्थापित करता है।

अतः यह अध्ययन अधराजण की रागणियों के साहित्यिक, छंदात्मक और सांस्कृतिक आयामों का समेकित विश्लेषण प्रस्तुत करते हुए यह प्रतिपादित करता है कि लोककाव्य परंपरा शास्त्रीय अनुशासन और सृजनात्मक स्वतंत्रता के मध्य एक सशक्त सेतु के रूप में कार्य करती है, जो न केवल परंपरा का संरक्षण करती है, बल्कि उसे निरंतर पुनर्सृजित भी करती है।

2 | साहित्य समीक्षा

अधराजण की हरियाणवी सांग-शैली रागणियों (17–23) के साहित्यिक एवं छंदात्मक विश्लेषण हेतु हिंदी साहित्य, लोककाव्य परंपरा तथा पिंगल शास्त्र से संबद्ध पूर्ववर्ती अध्ययनों का सम्यक् अवलोकन अनिवार्य है। हिंदी साहित्येतिहास के प्रमुख व्याख्याता रामचंद्र शुक्ल (2002) ने यह प्रतिपादित किया है कि लोकधारा में विकसित काव्य रूप जनमानस की संवेदनाओं और सामाजिक यथार्थ का सजीव प्रतिबिंब होते हैं, जहाँ संप्रेषणीयता और भाव प्रधानता को विशेष महत्त्व प्राप्त होता है। इसी परिप्रेक्ष्य में हजारीप्रसाद द्विवेदी (1990) ने भारतीय काव्य-परंपरा में लोक और शास्त्र के अंतर्संबंधों को रेखांकित करते हुए यह स्थापित किया कि दोनों परस्पर विरोधी न होकर एक-दूसरे के पूरक आयाम हैं। अधराजण की रागणियों में राधा–कृष्ण प्रतीक के माध्यम से निजी अनुभूति और सांस्कृतिक प्रतीकवाद का जो समन्वय दिखाई देता है, वह इसी अंतः प्रवाह का प्रत्यक्ष उदाहरण है।

लोकनाट्य और सांग-परंपरा पर केंद्रित आलोचनात्मक विमर्श में नामवर सिंह (2006) ने यह स्पष्ट किया है कि लोकाभिव्यक्ति के रूपों में निहित नाटकीयता, संवादात्मकता और प्रदर्शन शीलता उन्हें केवल काव्य तक सीमित नहीं रखती, बल्कि उन्हें सामाजिक-सांस्कृतिक विमर्श का सशक्त माध्यम बनाती है। अधराजण की रागणियों में संवादात्मक संरचना—विशेषतः रागनी 17 में राधा–केशव संवाद तथा रागनी 21 में अभियोगात्मक कथन—इस दृष्टिकोण की पुष्टि करती है। भाषा-विमर्श के संदर्भ में रामविलास शर्मा (2001) ने यह प्रतिपादित किया है कि लोक भाषाएँ अपनी प्रांजलता और जीवन-सापेक्षता के कारण अभिव्यक्ति की दृष्टि से अधिक प्रभावकारी होती हैं। हरियाणवी रागणियों की ध्वन्यात्मकता और सहज भाषिक संरचना इस सिद्धांत को सुदृढ़ करती है।

पिंगल शास्त्र और छंद-विधान के संदर्भ में केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' (1985) तथा भोलानाथ तिवारी (1998) ने मात्रा, यति और लय को काव्य की आधारभूत संरचनात्मक इकाइयों के रूप में स्थापित किया है। उनके अनुसार छंद केवल औपचारिक अनुशासन न होकर भावों के संप्रेषण का लयात्मक माध्यम है। अधराजण की रागणियों में यह तथ्य स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि शास्त्रीय छंद-विधान का पालन करते हुए भी कवि लोक-प्रस्तुति की आवश्यकताओं के अनुरूप लचीलेपन को अपनाता है। इस संदर्भ में कपिला वात्स्यायन (1996) का यह मत भी उल्लेखनीय है कि भारतीय प्रदर्शनकारी कलाओं में काव्य, संगीत और अभिनय का त्रिवेणी-संयोजन ही उनके सौंदर्य का मूल आधार है; सांग-शैली की रागणियाँ इसी समन्वित संरचना का सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करती हैं।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में गोपीनाथ शर्मा (1998) तथा के. सी. यादव (2010) के अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि उत्तर भारत एवं राजस्थान के सामंती दरबारों में सत्ता-संघर्ष, षड्यंत्र और लैंगिक असमानताओं की जटिल संरचनाएँ विद्यमान थीं। अधराजण की कथा में रसकपूर के चरित्र के माध्यम से इन यथार्थों का प्रभावी पुनर्संयोजन दिखाई देता है, जहाँ एक स्त्री प्रेम, प्रतिष्ठा और सत्ता के अंतर्विरोधों के मध्य संघर्षरत रहते हुए आरोप, संदेह और अन्याय का सामना करती है। स्त्री-विमर्श के संदर्भ में निर्मला जैन (2003) ने यह प्रतिपादित किया है कि साहित्य में स्त्री-अनुभूति प्रायः दबी हुई रहती है, किंतु लोकसाहित्य में वह अधिक प्रत्यक्ष और संवेदनात्मक रूप में अभिव्यक्त होती है; रागनी 22 और 23 में यह प्रवृत्ति स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है।

समकालीन शोध-परिप्रेक्ष्य में हरियाणवी रागणी परंपरा पर किए गए नवीन अध्ययनों—विशेषतः हीर–राँझा एवं अन्य लोक कथात्मक श्रृंखलाओं पर आधारित विश्लेषणों—ने यह सिद्ध किया है कि पिंगल शास्त्र की संरचनात्मक उपस्थिति लोककाव्य में सक्रिय रूप से रूपांतरित होती है और प्रदर्शनपरक संदर्भों में नई अर्थवत्ता ग्रहण करती है (आशोधिया, 2026a; 2026b; 2026c)। वर्तमान अध्ययन इसी विमर्श को आगे बढ़ाते हुए अधराजण की रागणियों (17–23) का विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि लोककाव्य परंपरा शास्त्रीय अनुशासन और सृजनात्मक स्वतंत्रता के मध्य एक सजीव सेतु का कार्य करती है।

अतः उपर्युक्त साहित्यिक एवं आलोचनात्मक परंपराओं के आलोक में यह निष्कर्ष स्थापित होता है कि अधराजण की रागणियाँ बहुस्तरीय सांस्कृतिक दस्तावेज हैं, जिनमें छंदशास्त्रीय संरचना, लोकाभिव्यक्ति, ऐतिहासिक संदर्भ और स्त्री-अनुभूति का सुसंगठित समन्वय विद्यमान है। यह साहित्य समीक्षा वर्तमान अध्ययन को एक सुदृढ़ सैद्धांतिक एवं विश्लेषणात्मक आधार प्रदान करती है, जिसके माध्यम से रागनी 17–23 का व्यापक और गहन अध्ययन संभव हो पाता है।

3 | शोध पद्धति

वर्तमान शोध का पद्धतिगत आधार गुणात्मक एवं व्याख्यात्मक दृष्टिकोण पर आधारित है, जिसके अंतर्गत अधराजण की हरियाणवी सांग-शैली की रागणियों (विशेषतः रागनी 17–23) का बहुआयामी विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में पाठ-विश्लेषण, विमर्शात्मक आलोचना तथा छंदशास्त्रीय परीक्षण को समन्वित रूप में अपनाया गया है, ताकि रचनाओं के साहित्यिक, सांस्कृतिक और संरचनात्मक आयामों का सम्यक् अन्वेषण संभव हो सके। रागनी 17–23 का चयन इस आधार पर किया गया है कि ये रागणियाँ कथानक के उस चरण का प्रतिनिधित्व करती हैं जहाँ भावात्मक उत्कर्ष, नाटकीय जटिलता और वैचारिक तीव्रता अपने चरम पर अभिव्यक्त होती है। इस खंड में विरह, षड्यंत्र, राजसत्ता का दबाव, स्त्री-अस्मिता तथा न्याय-विवेक जैसे तत्वों का अंतर्संबंध काव्य-चक्र की व्यापक संरचना को समझने के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

पाठ-विश्लेषण की प्रक्रिया में प्रत्येक रागनी के मूल पाठ का सूक्ष्म अध्ययन करते हुए उसके कथ्य, प्रतीक-व्यवस्था, बिंब-निर्माण, संवादात्मक संरचना तथा अलंकारिक विन्यास का विश्लेषण किया गया है। विशेष रूप से रागनी 17 में राधा–केशव संवाद के माध्यम से आत्म संवाद की अभिव्यक्ति, रागनी 18–20 में महाराज के मनोवैज्ञानिक द्वंद्व, तथा रागनी 21–23 में दरबारी षड्यंत्र और स्त्री-विमर्श के आयामों का आलोचनात्मक परीक्षण किया गया है। इस प्रकार प्रत्येक रागनी को उसके संदर्भ गत कथानक के साथ जोड़कर पढ़ा गया है, जिससे काव्य और कथा के अंतर्संबंधों की स्पष्टता स्थापित हो सके।

छंदशास्त्रीय विश्लेषण के अंतर्गत पिंगल शास्त्र के प्रमुख सिद्धांतों—मात्रा-विन्यास, यति, तुकांत योजना तथा टेक की संरचना—के आधार पर रागणियों के छंदात्मक स्वरूप का परीक्षण किया गया है। यह परीक्षण केवल सैद्धांतिक स्तर तक सीमित न रहकर मंचीय प्रस्तुति तथा तर्ज के संदर्भ में भी किया गया है, जिससे यह स्पष्ट किया जा सके कि लोक कवि ने शास्त्रीय अनुशासन और प्रस्तुति की व्यावहारिक आवश्यकताओं के मध्य किस प्रकार संतुलन स्थापित किया है। रागनी 17–23 में छंदात्मक लचीलेपन, भावानुकूल लय-परिवर्तन तथा टेक की पुनरावृत्ति के माध्यम से भाव-संप्रेषण को सुदृढ़ किया गया है, जिसे इस अध्ययन में विशेष रूप से रेखांकित किया गया है।

इसके अतिरिक्त, यह शोध ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भों की व्याख्या के लिए अंतः विषयक दृष्टिकोण को भी समाहित करता है, जिसमें इतिहास, लोकसाहित्य और स्त्री-विमर्श के सिद्धांतों का उपयोग किया गया है। रसकपूर के चरित्र तथा जयपुर दरबार से संबंधित घटनाओं का विश्लेषण केवल साहित्यिक दृष्टि से नहीं, बल्कि सामाजिक संरचनाओं और सत्ता-संबंधों के व्यापक परिप्रेक्ष्य में भी किया गया है। इस प्रकार, शोध पद्धति का समग्र स्वरूप पाठ, संदर्भ और संरचना के समन्वित विश्लेषण पर आधारित है, जो रागनी 17–23 की साहित्यिक, छंदात्मक और सांस्कृतिक सार्थकता को प्रमाणित करता है।

4 | कथात्मक एवं साहित्यिक विश्लेषण

रागणी 17–23 की श्रृंखला में कथानक रसकपूर के अंतर्मन, दरबारी षड्यंत्रों की तीव्रता और प्रेम के आध्यात्मिक रूपांतरण के बीच अंतर संबद्ध द्वंद्व के रूप में विकसित होता है। इन रचनाओं में कवि ऐतिहासिक प्रसंगों का पुनर्संयोजन करते हुए उन्हें लोक-चेतना और सांग-परंपरा की संवेदनात्मक संरचना में रूपांतरित करता है। रागणी 17 में रसकपूर का राधा-भाव में प्रवेश आत्मसंवादात्मक चेतना को उद्घाटित करता है, जहाँ विरह केवल भावनात्मक स्थिति न रहकर दार्शनिक स्वीकार्यता का रूप ग्रहण करता है। “किरशन, तूँ ही बतादे राधा, रोवै क्यूँ पल पल तेरी, याद में” तथा “राधे,

न्यारी डगरिया म्हारी, चलणा पड़ैगा एकला, बाद में" जैसी पंक्तियाँ प्रेम की अनिवार्य एकाकी यात्रा को प्रतिपादित करती हैं। यहाँ संवादात्मक विन्यास अंतर्मन के द्वैत को रूपायित करता है, जिसमें प्रश्न और उत्तर एक ही चेतना के भीतर घटित होते हैं।

रागणी 18 और 19 में कथानक का केंद्र बाह्य संसार की ओर स्थानांतरित होता है, जहाँ महाराज जगतसिंह के मन में उत्पन्न संशय और दरबारी प्रभाव प्रमुख हो उठते हैं। "ना कोए चिट्ठी ना कोए पत्री, मन्नै पड़गी याद कराणी" तथा "वा रँगमहलां में ऐश करै कौण, उसके दिल मे बसग्या" जैसी पंक्तियाँ अनुपस्थिति को संदेह में रूपांतरित करती हैं। रागणी 19 में यह संदेह विषाक्तता का रूप लेता है, जिसे "मेवे की फळी, वा रस की डळी, हुई जहर घुळी" और "कोयल सी कूक, हो रही सै मूक" जैसे बिंबों के माध्यम से व्यक्त किया गया है। इन प्रतीकों के द्वारा सौंदर्य और विष, स्वर और मौन के अंतर्विरोध को सघन रूप में अभिव्यक्त किया गया है।

रागणी 20 में मनोवैज्ञानिक तनाव चरम पर पहुँचता है, जहाँ प्रेम, आक्रोश और अपमान का समवर्ती विस्फोट दिखाई देता है। "बेवफा तेरे चर्चे सुण सुण, मेरा काळजा पाट गया" तथा "मेरा दिमाक गवाही दे रहया सै, पर दिल मानण तै नाट गया" जैसी पंक्तियाँ भाव और तर्क के संघर्ष को सशक्त रूप में प्रस्तुत करती हैं। इसके पश्चात रागणी 21 में दूणी ठाकुर का अभियोगात्मक स्वर उभरता है, जहाँ "रसकपूर नै जो पाप करे, आज एक एक पाप गिणाऊँगा" जैसी उद्घोषणाएँ दरबार को न्यायिक स्थल से अधिक षड्यंत्रात्मक मंच में परिवर्तित करती हैं। आरोपों की आवृत्ति और तुकांत विन्यास कथानक को तीव्र नाटकीयता प्रदान करते हैं।

रागणी 22 में संवेदनात्मक स्वर पुनः प्रमुख होता है, जहाँ अधराजण की विनम्र किंतु दृढ़ वाणी न्याय-बोध को केंद्र में लाती है। "घट घट में जब राम बसै तो, तूं घट के परदे खोल" तथा "हाथ जोड़कै कहती साजन सोच समझ कै नै बोल" जैसी पंक्तियाँ व्यक्तिगत निवेदन से आगे बढ़कर नैतिक चेतना का रूप ग्रहण करती हैं। "उस रामचन्द्र नै सीता जी कै, न्यू ए दोष लगाया था" जैसे मिथकीय संदर्भ स्त्री के ऐतिहासिक अनुभव और सामाजिक न्याय की विडम्बना को उद्घाटित करते हैं, जिससे रचना का अर्थ-विस्तार बहुस्तरीय हो उठता है।

रागणी 23 में करुण रस अपनी पराकाष्ठा पर व्यक्त होता है, जहाँ शारीरिक यातना और आत्मसम्मान के विघटन का समवर्ती चित्रण मिलता है। "हो बाहदर मतन्या मारै लात, राखले अधराजण की बात" तथा "कपड़े होगे झीरमझीर, पाटग्या मेरा रेशमी चीर" जैसी पंक्तियाँ हिंसा और अपमान की तीव्र अनुभूति को मूर्त रूप देती हैं। "काल ताही मैं हाकिम थी, अर तूँ नौकर मैं राणी थी" जैसे स्मृति-बिंब सत्ता के क्षण भंगुर स्वरूप और वर्तमान की विडम्बना को रेखांकित करते हैं।

समग्रतः रागणी 17–23 की यह श्रृंखला कथात्मक प्रवाह, भावात्मक तीव्रता और प्रतीकात्मक गहनता का समन्वित रूप प्रस्तुत करती है। इन रचनाओं में लोकभाषा की सहजता और काव्यात्मक संरचना की सुसंगति इस प्रकार अंतर्ग्रथित है कि प्रत्येक पंक्ति कथा-विकास के साथ-साथ व्यापक सामाजिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक विमर्श को भी सशक्त करती है।

5 | पिंगल एवं छंदात्मक विश्लेषण

रागनी 17–23 का पिंगल एवं छंदात्मक विश्लेषण यह प्रतिपादित करता है कि अधराजण की सांग-शैली केवल भाव प्रधान अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि छंद-संरचना की दृष्टि से भी अत्यंत सुसंगठित, अनुशासित और प्रयोग धर्मी है। इन रचनाओं में वर्णिक और मात्रिक छंदों का संतुलित समन्वय इस प्रकार रूपायित हुआ है कि शास्त्रीय पिंगल परंपरा और लोकाभिव्यक्ति की स्वाभाविकता एक साथ सक्रिय दिखाई देती हैं। रागनी 17, जो संवादात्मक संरचना पर आधारित है, में राधा–कृष्ण रूपक के माध्यम से छंद-विन्यास को भावानुकूल लचीलापन प्रदान किया गया है। "किरशन, तूँ ही बतादे राधा, रोवै क्यूँ पल पल तेरी, याद में" तथा "राधे, न्यारी डगरिया म्हारी, चलणा पड़ैगा एकला, बाद में" जैसी पंक्तियों में लगभग 28–30 मात्राओं का विन्यास, "6+8+8+8" की यति-संरचना के साथ, भावों के क्रमिक विस्तार को संभव बनाता है, जबकि टेक की पुनरावृत्ति लयात्मक स्थिरता और विरह की संकेन्द्रित अनुभूति को सुदृढ़ करती है।

रागनी 18 और 19 में छंदात्मक प्रवाह अपेक्षाकृत तीव्र और उग्र रूप ग्रहण करता है, जो कथानक में विकसित हो रहे संशय और आंतरिक तनाव के अनुरूप है। "परवाने लिए बाँच भूप नै, धरी एक एक चिट्ठी न्यारी" तथा "हलकारे तै बूझण लाग्या, कित खुगी दिल की प्यारी" जैसी पंक्तियों में मूल "6+8+8+8" विन्यास का पालन करते हुए भी मात्रा-संख्या 30–32 तक विस्तृत हो जाती है, जो भाव-आवेग की तीव्रता का सूचक है। रागनी 19 की पंक्तियों—"मेवे की फळी, वा रस की डळी, हुई जहर घुळी" तथा "कोयल सी कूक, हो रही सै मूक, गई फर्ज चूक"—में लघु-दीर्घ मात्राओं का तीव्र उतार-चढ़ाव रचना के विषाद, विडम्बना और व्यंजना-गहनता को और अधिक प्रभावी बनाता है।

रागनी 20 में छंदात्मक संरचना भावात्मक विस्फोट के साथ और अधिक सघन रूप ग्रहण करती है। "बेवफा तेरे चर्चे सुण सुण, मेरा काळजा पाट गया" तथा "जी कर रहया तेरी नाड़ तार ल्यूं, जब्त करया दिल डाट गया" जैसी पंक्तियों में "4+8+8+10" का विन्यास अंतिम चरण में भावोच्छवास को उत्कर्ष तक पहुँचाता है। यहाँ छंद का अनुशासन और भाव की तीव्रता परस्पर विरोधी न होकर सहायक रूप में कार्य करते हैं। रागनी 21 में घोषणात्मक एवं अभियोगात्मक शैली के कारण छंद अपेक्षाकृत अधिक क्रमबद्ध और नियंत्रित प्रतीत होता है—"रसकपूर नै जो पाप करे, आज एक एक पाप गिणाऊँगा" तथा "राजद्रोह की जो करी हिमाकत, सब अपराध बताऊँगा"—जहाँ "गिणाऊँगा–बताऊँगा–कराऊँगा" जैसे तुकांत पद एक विधिक लय का निर्माण करते हैं, जो दरबारी अभियोग की संरचना को सुदृढ़ करता है।

रागनी 22 में पुनः करुण और विनयात्मक स्वर के अनुरूप छंद प्रवाहमान और संतुलित हो जाता है। "घट घट में जब राम बसै तो, तूं घट के परदे खोल" तथा "हाथ जोड़कै कहती साजन, सोच समझ कै नै बोल" जैसी पंक्तियों में "4+8+8+10" का विन्यास भाव-प्रवणता को संयमित करता है, जबकि "खोल–बोल–तोल" की तुकांत योजना श्रुति माधुर्य को सुदृढ़ करती है। रागनी 23 में करुण रस की तीव्रता के साथ छंद अपेक्षाकृत मुक्त रूप ग्रहण करता है, तथापि उसका आधारभूत ढाँचा यथावत बना रहता है। "हो बाहदर मतन्या मारै लात, राखले अधराजण की बात" तथा "काल ताही मैं हाकिम थी, अर तूँ नौकर मैं राणी थी" जैसी पंक्तियाँ मात्रा-विन्यास की लचीलेपन के माध्यम से मंचीय प्रस्तुति में भावात्मक तीव्रता को उभारती हैं और श्रोता के साथ तात्कालिक संवेदनात्मक संबंध स्थापित करती हैं।

इन समस्त रागणियों में टेक की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, जो छंद को संरचनात्मक एकता प्रदान करने के साथ-साथ भाव-संकेन्द्रण का केंद्र भी बनती है। "याद में–बाद में–साथ में", "प्यारी–जारी–यारी", "खोल–बोल–तोल" जैसी तुकांत योजनाएँ यह सिद्ध करती हैं कि कवि ने पिंगल के नियमों का निर्वाह करते हुए लोकभाषा की स्वाभाविकता को अक्षुण्ण बनाए रखा है। तर्ज का चयन भी इस संदर्भ में उल्लेखनीय है, क्योंकि लोकप्रिय धुनों—जैसे "मनै इबकै बचाले री माता…", "हूर परी", "दिल के टुकड़े…", "दुकलिया" तथा "हो छोरे मतना पकड़े हाथ"—के प्रयोग से पारंपरिक छंद-संरचना को समकालीन श्रवण-संवेदना से जोड़ा गया है, जिससे रचनाएँ अधिक सुलभ, स्मरणीय और मंचोपयोगी बनती हैं।

समग्रतः रागनी 17–23 का छंदात्मक विश्लेषण यह सिद्ध करता है कि अधराजण की रचनाएँ शास्त्रीय पिंगल परंपरा और लोक-रचनात्मक स्वतंत्रता के मध्य एक सुसंतुलित संबंध स्थापित करती हैं। मात्रा, यति, तुक और टेक का समन्वय एक ऐसे जीवंत छंद-विधान का निर्माण करता है, जो काव्य-सौंदर्य के साथ-साथ कथानक की प्रगति, भावात्मक तीव्रता और मंचीय प्रभावोत्पादकता को भी सुदृढ़ करता है। इस प्रकार ये रागणियाँ पिंगल शास्त्र के व्यावहारिक, गतिशील और लोकानुकूल रूप का सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करती हैं।

6 | चर्चा

उपरोक्त कथात्मक, साहित्यिक तथा पिंगल-आधारित छंदात्मक विश्लेषण के आलोक में रागणी 17–23 का समेकित अवलोकन यह स्पष्ट करता है कि यह काव्य-श्रृंखला केवल ऐतिहासिक प्रेम-कथा का पुनर्सृजन नहीं, बल्कि लोक-सांस्कृतिक संवेदना, सत्ता-संरचना और मानवीय मनोविज्ञान के अंतर्संबंधों का बहुस्तरीय प्रतिपादन है। रागणी 17 में आरंभ होने वाली आत्मसंवादात्मक प्रक्रिया—जो राधा–केशव संवाद के माध्यम से अभिव्यक्त होती है—क्रमशः रागणी 20 तक पहुँचते-पहुँचते गहन मनोवैज्ञानिक द्वंद्व में परिणत हो जाती है, जहाँ अनुभवजन्य सत्य और बाह्य सूचनाओं के बीच संतुलन स्थापित करना असंभव-सा प्रतीत होता है। इस प्रकार, व्यक्तिगत अनुभूति का क्षेत्र धीरे-धीरे सामाजिक और राजनीतिक दबावों से प्रभावित होकर जटिल हो उठता है।

दरबारी षड्यंत्रों का आयाम इस श्रृंखला में केवल कथानक-प्रेरक तत्व के रूप में उपस्थित नहीं है, बल्कि वह सामंती सत्ता-व्यवस्था की उस संरचना का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें सूचना-नियंत्रण और शक्ति-केंद्रितता सत्य के स्वरूप को विकृत कर देती है। रागणी 18 से 21 तक महाराज जगतसिंह के भीतर विकसित संशय यह संकेत देता है कि निर्णय-प्रक्रिया किस प्रकार अप्रमाणित आरोपों, एकांगी संवाद और भावनात्मक आवेगों के प्रभाव में संचालित होती है। इस परिप्रेक्ष्य में प्रेम का निजी अनुभव राजनीतिक उपकरण में रूपांतरित हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप न्याय-विवेक का ह्रास और निर्दोषता का दमन संभव होता है। यहाँ काव्य सत्ता और संवेदना के अंतर्विरोध को सघन रूप में उद्घाटित करता है।

स्त्री-विमर्श की दृष्टि से यह रागणी-समूह विशेष महत्त्व ग्रहण करता है, क्योंकि रसकपूर का चरित्र एक निष्क्रिय पीड़िता के रूप में नहीं, बल्कि आत्मगौरव और नैतिक चेतना से संपन्न व्यक्तित्व के रूप में उभरता है। रागणी 22 और 23 में उसकी वाणी विनम्रता और प्रतिरोध के संतुलित स्वर के साथ न्याय की अपील करती है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि लोककाव्य में स्त्री-अनुभूति केवल करुणा का विषय न रहकर आत्मस्वीकृति और सांस्कृतिक प्रतिरोध का माध्यम भी बनती है। राम–सीता प्रसंग का अंतर्पाठ इस विमर्श को व्यापक ऐतिहासिक संदर्भ प्रदान करता है, जो स्त्री के प्रति संदेह और दंड की दीर्घकालिक सामाजिक प्रवृत्ति को रेखांकित करता है।

छंदात्मक और प्रदर्शनात्मक परिप्रेक्ष्य में यह श्रृंखला इस तथ्य की पुष्टि करती है कि पिंगल शास्त्र के सिद्धांत लोक-प्रयोग में स्थिर न रहकर अनुकूलन शील रूप ग्रहण करते हैं। मात्रा-विन्यास, यति और तुकांत योजना के साथ टेक की पुनरावृत्ति तथा तर्ज-आधारित संरचना काव्य की लयात्मकता को मंचीय प्रभावोत्पादकता से जोड़ती है। इस प्रकार छंद का अनुशासन और प्रदर्शन की आवश्यकताएँ परस्पर सहजीवी संबंध स्थापित करती हैं, जहाँ साहित्यिकता और श्रव्य-सौंदर्य एक-दूसरे को सुदृढ़ करते हैं।

समग्रतः रागणी 17–23 का यह विश्लेषण यह प्रतिपादित करता है कि सांग-परंपरा में निहित काव्य केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ, सांस्कृतिक स्मृति और मानवीय संवेदना का सशक्त अभिव्यक्ति-क्षेत्र है। इन रचनाओं की बहुस्तरीय अर्थवत्ता यह सिद्ध करती है कि लोककाव्य शास्त्रीय अनुशासन और सृजनात्मक स्वतंत्रता के मध्य एक गतिशील सेतु के रूप में कार्य करता है, जो परंपरा को संरक्षित रखते हुए उसे निरंतर पुनर्सृजित भी करता है।

7 | निष्कर्ष

अधराजण की हरियाणवी सांग-शैली की रागणियों, विशेषतः रागणी 17–23, का समग्र विश्लेषण यह प्रतिपादित करता है कि यह काव्य-खंड भारतीय लोकसाहित्य की उस सुदृढ़ परंपरा का प्रतिनिधि है, जहाँ ऐतिहासिक यथार्थ, कवि कल्पना और सामाजिक-सांस्कृतिक चेतना का सुसंगत समन्वय विद्यमान है। इन रागणियों में निहित कथात्मक संरचना केवल प्रेम और दरबारी षड्यंत्र का वर्णन न होकर सत्ता, विश्वास, संदेह और न्याय के अंतर्संबंधों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करती है। रसकपूर के चरित्र के माध्यम से स्त्री-अस्मिता, आत्मगौरव और अन्याय के विरुद्ध अंतर्निहित प्रतिरोध का जो रूप उभरता है, वह इस काव्य-श्रृंखला को विशिष्ट वैचारिक गहराई प्रदान करता है।

रागणी 17 में आत्म संवाद से आरंभ होने वाला भाव-प्रवाह रागणी 18 से 21 के मध्य दरबारी षड्यंत्रों और मनोवैज्ञानिक द्वंद्वों के कारण क्रमशः तीव्र होता हुआ रागणी 22 और 23 में करुणा तथा नैतिक प्रतिरोध की पराकाष्ठा तक पहुँचता है। यह क्रमिक विकास इस तथ्य को रेखांकित करता है कि कथानक का विन्यास केवल घटनाओं के अनुक्रम पर आधारित न होकर भावात्मक उत्कर्ष और अवनति के सुनियोजित संतुलन पर निर्मित है। विशेषतः महाराज जगतसिंह के अंतर्द्वंद्व और रसकपूर की आत्म गौरवपूर्ण संवेदना के मध्य स्थापित तनाव मानवीय मनोविज्ञान की जटिलताओं को प्रभावी रूप में उद्घाटित करता है।

छंदात्मक परिप्रेक्ष्य में यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि पिंगल शास्त्र के सिद्धांत—मात्रा-विन्यास, यति, तुकांत योजना और टेक—इन रागणियों में सजगता के साथ प्रयुक्त हुए हैं, परंतु उनका अनुप्रयोग यांत्रिक न होकर भावानुकूल लचीलेपन से युक्त है। इस प्रकार शास्त्रीय अनुशासन और लोक-प्रस्तुति की व्यावहारिकता के मध्य एक संतुलित संबंध स्थापित होता है, जो सांग-परंपरा की विशिष्टता को परिभाषित करता है। तर्ज के चयन तथा संवादात्मक संरचना के माध्यम से इन रचनाओं की मंचीय प्रभावशीलता और सुदृढ़ होती है, जिससे वे पाठ्य काव्य के साथ-साथ एक जीवंत प्रदर्शनकारी रूप भी ग्रहण करती हैं।

सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से यह निष्कर्ष उभरता है कि लोककाव्य में स्त्री-अनुभूति केवल करुणा की अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि वह नैतिक प्रतिरोध और सामाजिक आलोचना का सशक्त माध्यम भी बनती है। रागणी 22 और 23 में अधराजण की वाणी न्याय और विवेक की जिस आग्रहपूर्ण अभिव्यक्ति के रूप में सामने आती है, वह लोकसाहित्य की अंतर्निहित आलोचनात्मक क्षमता को रेखांकित करती है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि रागणी 17–23 की यह श्रृंखला सांग-परंपरा की जीवंतता और गतिशीलता का सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करती है, जिसमें शास्त्र और लोक, संरचना और संवेदना, तथा इतिहास और कल्पना के मध्य निरंतर संवाद विद्यमान है। यह काव्य-खंड न केवल पिंगल शास्त्र के व्यावहारिक रूपांतरण को प्रमाणित करता है, बल्कि भारतीय लोकसाहित्य की उस सृजनात्मक ऊर्जा को भी उद्घाटित करता है, जो समय और समाज के साथ स्वयं को निरंतर पुनर्संयोजित करती रहती है।

संदर्भ सूची

[1] आशोधिया, ए. के. (2025). *अधराजण: हरयाणवी लोक रागणी संग्रह हरियाणवी किस्सा (रागनी साँग शैली में)* (द्वितीय संस्करण). अविकावनी पब्लिशर्स।

[2] आशोधिया, ए. के. (2026). हीर–राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा: पिंगल शास्त्र के आलोक में एक सांस्कृतिक विश्लेषण (रागणी 1–7). *द एकेडमिक: इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च, 4*(3), 2261–2265. https://doi.org/10.5281/zenodo.19542794

[3] आशोधिया, ए. के. (2026). हीर–राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा: पिंगल शास्त्र के आलोक में एक सांस्कृतिक विश्लेषण (रागणी 8–16). *शोधपत्र: इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंस एंड ह्यूमैनिटीज, 3*(4), 154–159. https://doi.org/10.70558/SPIJSH.2026.v3.i4.45689

[4] आशोधिया, ए. के. (2026). हीर–राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा: पिंगल शास्त्र के आलोक में एक सांस्कृतिक विश्लेषण (रागणी 23–28). *रिसर्च रिव्यू इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी, 11*(4), 14–20. https://doi.org/10.31305/RRIJM.2026.V11.N04.002

[5] द्विवेदी, हजारीप्रसाद. (1990). *हिंदी साहित्य की भूमिका*. राजकमल प्रकाशन।

[6] जैन, निर्मला. (2003). *साहित्य और स्त्री-विमर्श*. वाणी प्रकाशन।

[7] मिश्र, केदारनाथ 'प्रभात'. (1985). *पिंगल शास्त्र: सिद्धांत और प्रयोग*. लोकभारती प्रकाशन।

[8] शर्मा, गोपीनाथ. (1998). *राजस्थान का इतिहास*. राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी।

[9] शर्मा, रामविलास. (2001). *भाषा और समाज*. वाणी प्रकाशन।

[10] शुक्ल, रामचंद्र. (2002). *हिंदी साहित्य का इतिहास*. लोकभारती प्रकाशन।

[11] सिंह, नामवर. (2006). *कविता के नए प्रतिमान*. राजकमल प्रकाशन।

[12] तिवारी, भोलानाथ. (1998). *हिंदी काव्यशास्त्र*. किताब महल।

[13] वात्स्यायन, कपिला. (1996). *भारतीय पारंपरिक रंगमंच: बहुविध प्रवाह*. नेशनल बुक ट्रस्ट।

[14] यादव, के. सी. (2010). *हरियाणा का लोक साहित्य*. हरियाणा साहित्य अकादमी।

How to cite this article?

Ashodhiya, A. K. (2026). Adharajan's Haryanvi Saang-Style Raginis: An Analytical Study in the Context of Pingal Prosody and Folk-Cultural Perspectives (With Reference to Raginis 17–23): **अधराजण की हरियाणवी सांग-शैली रागणियाँ: पिंगल शास्त्र एवं लोक-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (रागणी** 17–23 **के संदर्भ में)**. *RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary*, *11*(5), 16-23. https://doi.org/10.31305/rrijm.2026.v11.n05.003